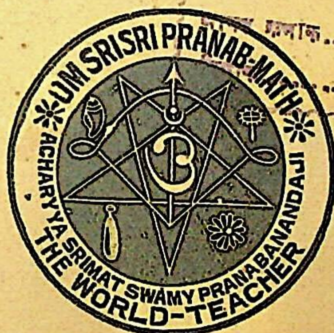
ॐ

जगद्गुरु

आचार्य स्वामी प्रणवानन्दजी

की

जीवन-लीला



स्वामी वेदानन्द

भारत सेवाश्रम संघ,

२११, रासबिहारी एभिनिउ, कलकत्ता—१६।

मूल्य ।)

कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।



भारत सेवाश्रम संघ का प्रतिष्ठाता

— जातिसंगठक —

आचार्य श्रीमत स्वामी प्रणवानन्दजी महाराज।

जगद्गुरु

आचार्य स्वामी प्रणवानन्दजी

युग के प्रयोजन से युगाचार्य का अभ्युदय

सनातन वैदिक आदर्श व हिन्दू धर्म-संस्कृति की पूर्ण प्रोज्वल मूर्त्ति युगाचार्य स्वामी श्री प्रणवानन्दजी महाराज का आविर्भाव हुआ है। धर्म हीन, भगवद्विमुख, भोग परायण, जड़ विज्ञान संस्कृति के प्रबल प्लावन से ओत-प्रोत मनुष्य समाज के त्राणके लिये अध्यात्म आदर्श परायण, धर्म-साधन-निष्ठ, भगवान के शरणागत, दिग्विजयी अखण्ड हिन्दू जाति गठन उनका उद्देश्य है।

हिन्दू समाज अध्यात्म आदर्श तथा संस्कृति का अचल निवास है। अंग्रेजी शासन काल में नास्तिकता और भोग परायणता इसमें प्रवेश कर रही थी। अभारतीय तथा अहिन्दू धर्म और संस्कृति इस पर आक्रमण कर इस को चौपट कर रही थी। इसके प्रतिरोध के लिये राजा राममोहन राय ने ब्रह्म समाज तथा स्वामी दयानन्दजी ने आर्य समाज की प्रतिष्ठा की; स्वामी कृष्णानन्द तथा शशधर तर्कचूड़ामणि प्रभृति ने सनातन धर्म के

प्रचार का बीड़ा उठाया, परमहंस श्री रामकृष्ण तथा स्वामी विवेकानन्दजी ने समन्वयमूलक धर्मादर्श व वेदान्त की नींव पर धर्म प्रचार तथा समाज सेवा का प्रवर्त्तन किया। गिरते हुए हिन्दू धर्म-समाज-संस्कृति को सुदृढ़ बनाना ही इन सब मनीषियों का मूल उद्देश्य था।

परन्तु अंग्रेजों की पराधीनता पाश तोड़ने को कटिबद्ध हिन्दू नेतागणोंने कूटराजनीतिक षड़यन्त्र जाल में फंस कर हिन्दू जाति, हिन्दू धर्म, हिन्दू समाज, संस्कृति को तिलाञ्जलि दे भारत की भौगोलिक स्वाधीनता को स्वीकार किया। हिन्दू जाति की विपत्ति चरम सीमा पर पहुंची। हिन्दू जाति की मर्यादा ध्वंस करने के लिये खण्डित भारतमें भगवद्विमुख, धर्महीन जड़वाद, धर्म निरपेक्ष राष्ट्र (Secular State) स्थापित हुआ, हिन्दू जनता हिन्दू धर्म से उदासीन है और नफरत करती है। हिन्दू समाज को कुसंस्कार युक्त कह कर घृणा की जा रही है। धर्म निष्ट हिन्दू गण आज हिन्दू नाम से परिचय देनेसे भी भयभीत और संकुचित होते हैं। हिन्दू और अहिन्दू सभी आज हिन्दूत्व के नाश की चेष्टा कर रहे हैं।

धर्म की चरम ग्लानि तथा अधर्म के प्रादुर्भाव के इस संकट काल में अशान्ति से पीड़ित मनुष्य समाज का करुण आर्त्तनाद सर्वनियन्ता श्रीभगवान के चरण कमलों में पहुंचा। अपनी प्रतिज्ञा की रक्षा और पाप का अन्त तथा सनातन धर्म के पुनः संस्थापन के लिये उनका महान संकल्प वर्त्तमान युग में एक

अलौकिक महातपः शक्ति सम्पन्न आचार्य के महान व्यक्तित्व के रूप में मूर्त्तिमान होकर प्रकटित हुआ। हिन्दुत्व विध्वंसिनी शक्ति संघ के विरोध में संग्राम घोषित कर आचार्य देव ने तीव्र आवाज उठायी—"मैं हिन्दू को हिंदू नाम से पुकारना चाहता हूं" हिन्दू और अधिक समय तक सोये हुए नहीं रहेंगे। हिन्दू फिर जागेंगे, उठेंगे और जगद्गुरु का आसन अधिकार कर मनुष्य समाज को शान्ति तथा मुक्ति के मार्ग पर परिचालित करेंगे, "हिन्दुओं भूलो मत कि तुम ऋषिओं के वंशज हो; तुम्हारा धर्म-समाज-संस्कृति—ऋषिओं के द्वारा गठित और परिचालित है। त्याग-संयम-सत्य-ब्रह्मचर्य तुम्हारा सनातन आदर्श है। उस आदर्श पर प्राणों की बाजी लगाकर डटे रहो; पतन होने पर भी तुम्हारा नाश नहीं होगा; पुनरुत्थान अवश्यम्भावी है।"

जगद्गुरु आचार्य के जीवन, वाणी तथा कर्म परिकल्पना पहले के महापुरुषों के धर्म प्रचार, समाज संस्कार, लोक संग्रह तथा जनसेवा मूलक आन्दोलनों को मिलाकर और समन्वय साधन कर उसके साथ संघ शक्ति रचना व क्षात्रधर्म का अनुशीलन संयोजित कर पूर्णाङ्ग जातिगठन मूलक कर्म योजना बनी है। भारत में एक अखण्ड महाशक्ति शाङ्गिनी, दिग्विजयी हिन्दू जाति का पुनर्गठन करके सारे मनुष्य समाज में सनातन आदर्श तथा आध्यात्मिक संस्कृति की वाणी और साधना का प्रचार

तथा प्रसार कर प्रकृत शान्ति तथा कल्याण का मार्ग प्रदर्शन करना ही इसका उद्देश्य है।

आचार्य का जन्म।

पूर्व बंगाल के एक गाँव में आचार्य देव ने जन्म ग्रहण किया और बचपन से कठोर तपश्चर्या की। गाँवके हुकुमबाज जमींदार गरीब प्रजा पर बड़ा ही अत्याचार करते थे। उनके पिता गरीब निहत्थे प्रजाजनों के साथ देते थे। इस समय प्रबल अन्यायी के हाथ से दुर्बलों के उद्धार के लिये उन्होंने साल भर कठोर व्रत धारण कर गृह देवता नील रुद्र महादेव की आराधना की। उनकी भक्ति तथा आग्रह से देवादिदेव महादेव ने प्रसन्न होकर उनके पुत्र रूपमें आविर्भूत होकर उनकी प्रार्थना पूरी करने का आश्वासन दिया। इस अलौकिक घटना के बाद ई० १८९६ में पुण्य माघी पूर्णिमा तिथि में गोधूलि लग्न में भगवदवतार आचार्य का जन्म हुआ।

देव शिशुकी अलौकिक प्रकृति।

अलौकिक देव शिशु का श्यामसुन्दर बदन, नयनाभिराम सुडौल मूर्त्ति सब को आकर्षित करती थी। उनका स्वभाव और भी विनम्र था। जन्म से ही वे धीर, स्थिर और शान्त थे। वयोवृद्धि के साथ उनकी अलौकिक प्रकृति विकास को प्राप्त होने लगी। खेल, कूद में कोई आग्रह नहीं ; भोजन के लिये कोई पर-वाह नहीं न किसी की गोद में जाने की इच्छा थी। सब समय

अचंचल चुपचाप रहते थे। शिशु का नाम विनोद पड़ा। वस्तुतः उनकी असाधारण तथा मधुर आकृति-प्रकृति, आचार व्यवहार, चाल चलन सबको परम प्रिय था।

संयम की प्रतिमूर्त्ति देव बालक।

शिशुको बालक की अवस्था प्राप्त हुई। उनमें उदासीन उन्मना तथा निरासक्त भाव विशेष परिस्फुट हुआ। कभी-कभी ऐसा होता था कि बहुत समय तक उनका पता ही नहीं मिलता था। पिता-माता खोजते-खोजते देख पाते कि बालक सिद्धार्थ (तथागत बुद्धदेव) जैसा किसी वृक्ष के नीचे ध्यानस्थ होकर बैठा है। वाह्य ज्ञान बिलकुल नहीं है। बालक विना प्रयोजन के न कोई बात करता, न किसी विषय में आग्रह दिखलाता, न किसी तरफ ताकता है। यहाँ तक कि बिना प्रयोजन एक पग तक नहीं उठता, मानो कि संयम ही बालक मूर्त्ति में आविर्भूत है।

वैराग्य मूर्त्ति विनोद।

किशोरावस्था के साथ विनोद में विवेक विचार वैराग्य का प्रकाश होने लगा। विनोद नियमित रूपसे पाठशाला जाते थे पर अध्ययन में आग्रह नहीं था; शिक्षक जब पाठ बोलते रहते थे तब वह किसी भाव समुद्र में डूबा हुआ वाह्य ज्ञान से अचेत होता था। विद्यालयकी छुट्टी के बाद सब शिक्षक तथा विद्यार्थी घर चले गये पर विनोद में वाह्य-ज्ञान नहीं है, चिन्ता मग्न बैठा है। चेतना आने पर घर की तरफ धीरे-धीरे पग बढ़ाते थे। वे शिक्षक छात्र

सबके प्रिय थे, कोई किसी दिन उनके इस भाव में बाधा नहीं डालता था। वे मकान के बाहर अपनी कुटिया में रहते थे; अनेक समय ऐसा देखा जाता था कि पुस्तक खुली पड़ी है— बत्ती जल रही है—परन्तु वे ध्यान मग्न हैं। रात बीत गई पर ध्यान नहीं टूटा। बाहर से हल्ला मचाने पर वे अपने आप में आते थे। श्मशान से अपने भतीजे के कंकाल को उठा लाये और उसी को सामने रखकर दिन पर दिन शरीर-संसार, जीवन और यौवन के परिणाम की चिन्ता में बिताते थे। केवल आचार्य शंकर के जीवन में इतने बचपन में ऐसा अलौकिक विवेक और वैराग्य की तीव्रता देखी गयी।

अलौकिक दर्शन व भाव

संयम, वैराग्य, ध्यान और बाह्य ज्ञान का अभाव ऐसा प्रबल था कि उस दिव्य जीवन के दर्शन और अनुभूति किसी ने जान नहीं पाई। क्या चाहता है, क्या करता है, किसी को पता ही नहीं मिलता था। पश्चात काल में त्यागी सन्तानों के जीवन गठन के उपदेश करते हुए; साधन जीवन में प्रोत्साहन देने के लिये जो-कुछ बोलते थे उसीसे थोड़ा-बहुत मालूम पड़ता था। किसी समय लापरवाही से तुलसी पेंड़ पर झुककर वे समाधिमग्न हो गये थे तुलसी देवो ने अपने स्वरूप में प्रगट होकर दर्शन दिया। त्यागी सन्तानों को बोलते थे—तुलसी जाग्रत देवता है। थोड़ी-सी श्रद्धा व एकाग्रता के साथ दर्शन करने से वह बोलती है। एक

समय दुर्गा देवी की मूर्त्ति के सामने खड़े होकर उनमें संकल्प जाग्रत हुआ—सचमुच मूर्त्ति में देवी की शक्ति है तो दर्शन दें नहीं तो समझूंगा कि सब निरर्थक है और मूर्त्ति तोड़ डालूंगा। एकाएक देवी भुवन मोहिनी मूर्त्ति में प्रकाशित हुई पश्चात् वह ज्योति मूर्त्ति बालक में समा गयी और वह समाधिमग्न हो गये।

बचपन से विनोद अनुभव करता था कि एक अलौकिक शक्ति उसके जीवन, उसके चित्त और प्रत्येक कार्य को नियन्त्रित करती है। उसके जीवन से सर्व नियन्त्री शक्ति का महान उद्देश्य साधित होगा। कभी-कभी अपने साथियों में किसी बात के सिलसिले में बोल भी डालते थे पर वे लोग कुछ नहीं समझते थे।

विनोद का वाह्य व्यवहार

विनोद जनसंग से विरक्त, एकान्त वासी, वाह्य व्यापार से उदासीन रहने पर भी दो विषय में सर्वदा ख्याल रखता था (१) बालक और युवगणों को स्वास्थ्य तथा चरित्र गठन के लिये उपदेश तथा सहायता देना (२) दुखिया; विपन्न और असहायों को सहायता करना। उनका कोमल हृदय जीव दुख से व्याकुल होता था; महाप्रभु श्री चैतन्य देव जैसी दलित, निराश्रित, असहाय के लिये उनकी असीम कृपा थी, समाज के करोड़ों अज्ञ, अज्ञात, अवज्ञात, पतित, दलितों के प्रति यह अपार प्रेम और करुणा ही उनके जीवन का उद्देश्य जीवोद्धार, समाज संस्कार

तथा जातिगठन का मूल था। इस समय उनके आस-पास पवित्र चरित्र के बालक युवकों का एक दल गठित हुआ, उन्हीं में से अनेक ने त्यागी का जीवन ग्रहण कर उनके आलिंगन कार्य में जीवन उत्सर्ग किया। इन सब नवयुवकों के सामने बुद्धदेव का अपूर्व त्याग, शंकराचार्य का अलौकिक वैराग्य तथा श्री चैतन्य देव के प्रेम का आदर्श रखकर जीवन गठन का उपदेश और प्रोत्साहन देते थे।

ब्रह्मचर्य साधन और तपश्चर्या

बचपन से नमक और भात कभी-कभी कुछ उबली हुई सब्जी ही उनका भोजन था। इस प्रकार साधारण भोजन लेने पर भी बड़े २ वजनदार मुग्दरों भांजते थे। उनका कहना था—आलस्य, निद्रा, तन्द्रा ही महान शत्रु है। कसरत मानो उनकी साधना का ही अङ्ग था। कसरत से ही वे उन शत्रुओं से आत्मरक्षा करते थे। सुस्ती आने से ही कसरत करते थे। उनकी शारीरिक शक्ति असाधारण थी।

उनकी कुटिया में नीचे लिखी वस्तुएँ थीं—सोने बठने के लिये एक पाटा, पढ़ने की कुछ पुस्तकें, देवता की तस्वीरें, और एक जोड़ा विशाल मुग्दर की जोड़ी। पहनने के लिये एक सफेद वस्त्र और चद्दर। सर्दी या गर्मी सब समय यही व्यवहार में लाते थे। रात को एक घन्टा सोते थे : धीरे-धीरे वह भी छोड़ दिये और ६ साल तक निद्रा छोड़कर कठोर तप में संलग्न हो



तपस्वी ब्रह्मचारी विनोद

गये थे। पहले अपनी कुटियों में रहते थे, पीछे दिन भर कुटियों में रहते थे और रातको श्मशान में कठोर तप में मग्न रहते थे। एक समय ७ रोज समाधिमें रहनेके बाद नाक से प्रचुर रक्त बहने लगा। माता-पिता भयभीत होकर इलाज कराने का उद्योग किया। उन्होंने माता-पिता को समझाया कि यह कोई बीमारी नहीं है, तीव्र योग साधन की प्रतिक्रिया है। पहले सर्दी में वे एक कम्बल व्यवहार में लाते थे। पर एक रोज कुछ सुस्ती मालूम होने से वह भी छोड़ दिया।

अपने पिता-माता की आग्रह पर उनके कुल पुरोहित महाशयने विनोद से कहा—तुम थोड़ा दूध व्यवहार किया करो इससे तुम्हारे माता-पिता का कुछ शांति होगी। और घृत दुग्ध यह तो सात्विक भोजन है। जवाब में विनोद ने उनको समझा दिया कि—श्रीभगवानने मुझे जो शक्ति दी है उसीको बचाये रखने से नमक भात से ही हमें काफी शक्ति मिलेगी। थोड़ा-सा दूध भी तेज आगपर रखने से उबालकर गिर जाता है। अच्छे-अच्छे गुरूपाक द्रव्य भोजन करने से शरीर उत्तेजित हो शक्ति क्षय हो जाती है। अटूट ब्रह्मचर्य से हमारे शरीर और मन में कैसी अपार शक्ति और आनन्द है यह आपको मैं नहीं समझा सकूंगा।

दीक्षा—साधना—सिद्धि

१६१३ ई० में १७ वर्ष की अवस्था में नाथ सम्प्रदाय के

महात्मा योगीराज गम्भीर नाथ से वे दीक्षित हुए। दीक्षा के वाद से ही वे कभी वाह्य रहित कभी अर्द्धवाह्य अवस्था में रहते थे। नाथजी ने जंगल से खोज कर उन्हें लाकर कुछ खिला देते थे। थोड़े दिनों के वाद नाथजी के निर्देश से काशीधाम के असीघाट में आकर एक निर्जन मकान में समाधि मग्न रहने लगे। इस समय उनके शरीर में ऐसा ताप उठता था कि स्पर्श करना असम्भव था। किसी प्रकार की शारीरिक चेष्टा नहीं थी। इस समय एक वुढ़िया ने उनकी बड़ी सेवा की वरना उनके शरीर की रक्षा असम्भव थी। थोड़े समय के वाद नाथजी के निर्देशसे अपने गांव में लौटकर एक जंगल से कुटीया बना कर उसमें समाधि लगाये रहते थे। इस अवस्था में १७११ ई० में पौष पुर्णिमा को तिथि पर उनमें भगवत शक्ति का प्रकाश होने लगा। उसके बाद माघ पुर्णिमा में कदम्ब वृक्ष के नीचे निर्विकल्प समाधि में उनमें भगवत शक्ति का पूर्ण विकास हुआ और विश्व कल्याण कर "कर्म चक्र" के विवय में प्रत्यादेश मिला। उस समय उनकी २० वर्ष की अवस्था थी। पाश्चात् उनके वह सिद्धपाठ में ही "श्री श्री प्रवण मठ "और प्रख्यात भारत सेवाश्रम संघ" की नीव डाली गई। इस विषय में उनके लिखे हुए पत्रमें मिलता है—

"सर्व नियन्ताके आदेश से माघ की पुर्णिमा पर सिद्ध पीठ में हमलोगों के संघ की प्रान प्रतिष्ठा हुई थी। सव नियन्ता ने स्वयं संघ की वागडोर हाथ में ले रक्खी

है। माघ की पूर्णिमा के अवसर पर तपःशक्ति और तपस्तेज का पूर्ण विकास होता है। आकुल और व्याकुल भाव लेकर आने से ही उसके तपः प्रभाव और शुभदृष्टि का अनुभव और ग्रहण कर सकोगे।" सिद्धि लाभ के बाद से प्रति वर्ष माघी पूर्णिमा में सिद्ध पीठ पर भगवदवतार आचार्य देव का महातपः शक्ति का पूर्ण विकास होता है।

सन्यासी संघ संगठन और कर्मचक्र प्रवर्त्तन

ई० १९१९ से उन्होंने अनुप्राणित नवयुवकों की सहायता से जनहितकर कार्यका श्रीगणेश किया। तत्पश्चात बंगाल, बिहार, उड़ीसा व आशाम की सब जगह दुर्भिक्ष, बाढ़, महामारी इत्यादि के समय व्यापक रूप से सेवा कार्य होने लगा। कर्मचक्र प्रवर्त्तन के साथ उनके कर्म चक्र के भगवन्निर्द्दिष्ट उत्तर साधक त्यागी सन्तानगण उनके आश्रय में आने लगे। वे इन सब सर्वत्यागी सन्तानों से जगद्धिताय आत्मोत्सर्गकारी आदर्श सन्यासी संघ को रचना और विभिन्न स्थानों में आश्रम की प्रतिष्ठा करने लगे। संघ के प्राण स्वरूप उन सब त्यागी सन्तानों को अपने दिव्य जीवनके आदर्श पर गठित करने लगे। ई० १९२३ में उन्होंने सन्यास ग्रहणकर "आचार्य" रूप में आत्म प्रकाश किया और 'भारत सेवाश्रम संघ' की प्रतिष्ठा की।

त्यागी सन्तानों की शिक्षा और साधना।

वे सन्तानों को "बुद्ध का त्याग" "शंकर का वैराग्य"

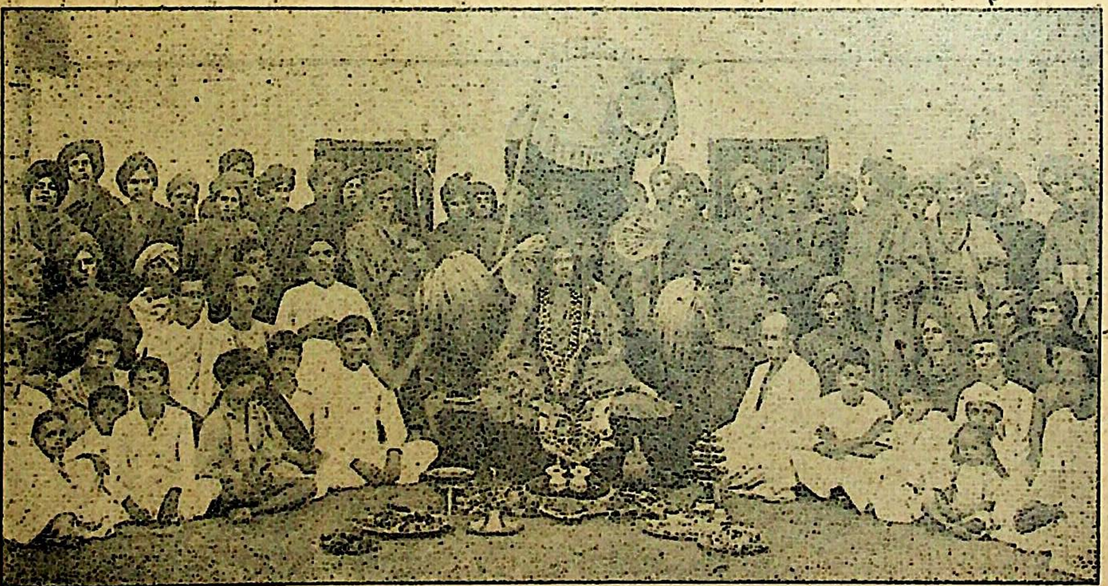
श्री "चैतन्य के प्रेम" के ऊपर चिन्तन करने का उपदेश करते थे। "तुम लोगों को त्याग की प्रोज्वल मूर्त्ति बनना पड़ेगा ; तुम लोग सनातन आदर्श से गठित होकर आर्य ऋषिओं के आसन ग्रहण कर अधःपतित देशको नीति और धर्मके मार्ग पर परिचालित करोगे। सैकड़ों हजारों तापित प्राणों को शान्ति पहुंचाना पड़ेगा। संघ को उसके योग्य बनाओ। क्षुद्र-क्षुद्र शक्ति की संगठित कर विराट संघ शक्ति बनाओ।

"संगठन करो। पतितों का त्राण करो, बिपन्न की रक्षा करो, निराश्रित को आश्रय दो और तापित प्राणों में शान्ति और सुख की मञ्जुल धारा प्रवाहित करो।"

वे ब्रह्मचर्य साधना में प्राणों को निछावर करनेका उपदेश करते हुए बोले—"रिपु का दमन और संयम साधन करना ही धर्मका मूलमन्त्र है। ब्रह्मचर्य ही श्रेष्ठ साधना है।" न तपस्तप इत्याहु-र्ब्रह्मचर्यं तपोत्तमम्" बीर्य ही जीवन, वीर्य ही प्राण, बीर्य ही अमृत, बीर्य ही अक्षय शक्ति का अनन्त उत्सव, बीर्य ही मनुष्य का मनुष्यत्व है। बीर्य धारण से मनुष्य देवत्व को प्राप्त करता है। वीर्य क्षय से मनुष्य पशुत्व को प्राप्त करता है। उनका कहना था कि आहार संयम, निद्रा संयस, बाक संयम, संकल्प साधना तथा मृत्यु चिन्ता (वराग्य विचार) ही ब्रह्मचर्य्य साधना की कुंज़ी है। वे बोलते थे—जो वीर्य धारण के लिये प्रयत्न करता है केवल दाल, भात, रोटी से ही उसका शरीर सबल और

कर्मठ रहता है। आहार और निद्रा परिमित रहना चाहिये। अतिरिक्त आहार और निद्रा से वीर्यक्षय और तमोगुण की वृद्धि होती है। इससे उद्यम, उत्साह, आनन्द, कर्म शक्ति विनष्ट हो जाती है। वाक संयम से मन की स्थिरता, गम्भीरता की वृद्धि, अटूट स्मृति शक्ति, तीव्र चिन्ता शक्ति, चित्त प्रसन्न और प्रशान्त होता है।

संकल्प रक्षा की साधना ही वस्तुतः सत्य की साधना है। सत्य की साधना से सत्य स्वरूप भगवान को पाया जा सकता है। "संकल्प में जो दृढ़ है और प्रतिज्ञा में जो अविचल है ; सब प्रकार की सिद्धि उसकी हथेली पर है।" यही उनकी दृढ़ निर्देश वाणी है। संकल्प शक्ति की वृद्धि के लिये छोटी-छोटी प्रतिज्ञा ग्रहण कर पूर्ण रूपेण पालन करने का उपदेश करते थे। दिवारात्रि २४ घण्टे के लिये नियम बान्धकर पल-पल का हिसाब रखकर उसके अनुसार चलने का उपदेश करते थे, वे मृत्यु चिन्ता या वैराग्य विचार का उपदेश करते हुए बोलते थे—मृत्यु चिंता से जगत की नश्वरता, शरीर की अनित्यता, जीवन यौवन की क्षण भंगुरता, जरा व्याधि मृत्युकी भीषणता अनुभव की जा सकती है उससे मनुष्य की विषयासक्ति। इद्रिय भोगाकांक्षा और पाप प्रवृत्ति जड़ से उखड़ जाती है। मृत्यु चिंता से ही बुद्धदेव को राजैश्वर्य त्याग करने में और आचार्य शंकर को बचपन में सन्यास ग्रहण करने में प्रेरणा मिली थी। मृत्यु चिन्ता ही बुद्ध का बुद्धत्व, शंकर का शंकरत्व और चैतन्य का चैतन्यत्व है।



श्री काशी धाम में महाशक्ति की पूजा के अवसर पर संघ-सन्यासी ब्रह्मचारियों के साथ संघनेता आचार्य देव

त्यागी संतानों को संशय था कि जन संग त्यागकर निर्जन जंगल या पर्वत की गुफा में एकान्त वास कर साधन भजन-तपस्या न करने से क्या भगवत कृपा मिल सकती है? उनलोगों के इस प्रश्न का समाधान देते हुए वे कहते थे—"गिरि कन्दरा में जाकर तपस्या नहीं करने से भगवत कृपा प्राप्त करना असम्भव है यह धारणा बिलकुल असत्य और प्रमाद पूर्ण है। इस धारणा से अनेक समय बहुतेरे गिरिकन्दरा में जाकर सब कुछ खोकर घर में लौटकर घृणित जीवन व्यतीत करते हैं। समाहित मन ही निर्जन गिरिगुफा है।

धर्मतत्व पर प्रकाश डालते हुए वे बोलते थे शास्त्र अध्ययन से, किसी से श्रवण कर कोई धर्म लाभ नहीं कर सकता है। अनुभूति, अनुष्ठान और आचरण ही धर्म के प्राण है। माला या झूला में धर्म नहीं हैं न तिलक में है न भोजन लिबास में और न मन्दिर मसजिदमें ही धर्म है। त्याग, संयम, सत्य, ब्रह्मचर्य में ही धर्म है।

सद्गुरु रूप में आत्मप्रकाश

ई० १९२४ में भगवत प्रतिनिधि युगाचार्य सद्गुरु रूप में आत्म प्रकाश कर त्यागी संघ-संतान तथा जनगण से पूजा आरती ग्रहण कर आशीर्वाद देने लगे। पद-पद पर प्रतिनियत उनका सर्वदर्शित्व तथा अलौकिक शक्तिका परिचय प्राप्त कर उनकी भागवत सत्वा में वे लोग विश्वासी करने लगे। चारों ओर गुरुभक्ति तथा गुरुसेवा का भाव और आदर्श प्रचारित होने लगा।

आचार्य देव गुरु पूजा के तत्व पर प्रकाश डालते हुए बोलते हैं—भारतीय जाति का जड़ से संस्कार करना चाहिये। हजारों



तीर्थ संस्कारक आचार्यदेव

ई० १९२४ में आचार्य देव ने तीर्थ संस्कार आन्दोलन का आरम्भ कर सबसे पहले गया धाम में धूर्तों का अत्याचार निराकरण करने के लिये श्री गयाधाम में आश्रम की प्रतिष्ठा की। गया ब्रह्मयोनि पर्वत के पाद देश में उपविष्ट आचार्य देव।

सालसे थोड़ी-थोड़ी मरम्मत करते हुए किसी प्रकार आत्मरक्षा की चेष्टा की गई है। इसके सारा शरीरमें चिन्दी हो चिन्दी लगी हैं। अब जड़ से इसका परिवर्त्तन करना पड़ेगा। वैदिक आदर्श के ढाचे में इसका पुनर्गठन करना पड़ेगा। इसलिये गुरु-भक्ति, गुरुसेवा तथा गुरु पूजा की प्रतिष्ठा आवश्यक है।

आचार्य-देव ने दिखलाया—भगवत प्रतिनिधि ब्रह्मज्ञ आचार्य ही सद्गुरु हैं; भारतीय वैदिक आदर्श, शिक्षा, साधना और संस्कृति की घनीभूत मूर्त्ति—उनका वचन ही वेद है। उनका प्रदर्शित मार्ग ही सनातन और अभ्रान्त पथ है। उनका आचरण ही सदाचार है। उनका अनुशासन ही शास्त्र है। उनका जीवन और लीला ही शास्त्र का प्रमाण और आधार है। वे ही नरदेह धारी साकार ब्रह्म या भगवान हैं और उनकी पूजा अर्चना-ध्यान-धारणा-सेवा-शुश्रूषा-अनुसरण से ही आध्यात्मिक भाव, तपः शक्ति तथा चरित्र की महिमा शरणागत शिष्य में प्रस्फुटित और विकसित होती है। यही वैदिक साधना संस्कृति की मर्म वाणी है। भगवत—मूर्त्ति आचार्य का अवलम्बन कर हिन्दू का ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ तथा सन्यास चारों आश्रमों युक्त हिन्दू समाज शुद्ध और सुगठित था।

उन्होंनेई० १९२४ में तीर्थ संस्कार आन्दोलन का श्रीगणेश किया। पहले गया में फिर धीरे-धीरे काशी, पुरी, प्रयागधाम में

आश्रम स्थापित कर यात्रियों को आश्रय दान तथा बिना किसी अत्याचार और कष्ट के तीर्थ कृत्य करने का बन्दोवस्त किया। तीर्थ स्थानों में जब लाखों यात्रियों का समागम होता है उस समय उन लोगों की देख-रेख तथा सहायता पहुंचाना और उनमें धर्म भाव प्रवेश कराने के लिये पर्व और उत्सव के अवसर पर विभिन्न प्रकार के धर्मानुष्ठान करना आरम्भ किया।

इसी साल उन्होंने भारत के कोने-कोने में संघ के आदर्श व सनातन धर्मको कीर्ति का प्रचार के लिये" प्रचारक दल का गठन किया। सन्यासी ब्रह्मचारी तथा कर्मियों से गठित यह प्रचारक दल आज तक भारत तथा भारत के वाहर सहर-सहर तथा गाँव-गाँव में प्रचार कार्य में संलग्न है।

ई० १६२७ में उन्होंने संघ में शृंखला बांधी और नियम के अनुसार सुगठित किया और संघ सेवक सम्मिलनी प्रतिष्ठित की; बालकों और युवकों को "ब्रह्मचर्य साधन तथा नैतिक चरित्रगठनकी शिक्षा दान आरम्भ किया। ई० १६२८ में गृहस्थाश्रम का आदर्श प्रचार और गृहस्थों को ईन्द्रिय संयम साधना और धर्म जीवन गठनको शिक्षा दानका प्रबल आन्दोलन उठाया और प्रचारक दलके साथ विजली की तरह विभिन्न प्रान्तों में भ्रमण कर देश भर में उस आन्दोलन की लहर फैलायी।

व्यक्तिगत तथा परिवारिक जीवन का संस्कार तथा संशोधन का संकल्प लेकर आचायदेव ने ऊपर लिखी कर्मनिष्ठा का प्रवर्त्तन

किया। इसके बाद उन्होंने सामाजिक तथा जातीय जीवन संस्कार की ओर ध्यान दिया।

शक्ति साधना प्रवर्तन।

आचार्य देवने प्रमाणित किया कि संघशक्ति तथा क्षात्र वीर्य का अभाव ही हिन्दू जाति के जीवनमें बहुत बड़ा दोष तथा पतन का मूल है। हिन्दू राष्ट्रके जीवन में इन दो महाशक्ति भण्डारों के अनुशीलन, विकास और प्रकाशका संकल्प लेकर ई० १९२८ में काशीधाममें महाशक्ति महामाया देवी दुर्गाका पूजा उत्सव किया। सर्व शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित सिंहवाहिनी, असुर नाशिनी, रण दुर्जय देवी दुर्गा क्षात्र वीर्य की प्रतिमूर्ति हैं। फिर यही देवी लक्ष्मी-सरस्वती-कार्तिक-गणेश या धनशक्ति-ज्ञानशक्ति-जनशक्ति की समष्ठि रूपिणी हैं। देवी दुर्गा संघशक्ति का प्रतीक है। यह महाशक्ति की महापूजा का संकल्प ही उनके हिन्दू समाज व राष्ट्रगठन की विराट कर्म योजना ने वास्तविक रूप ग्रहण किया।

केवल मूर्त्ति पूजा आज हिन्दू की शक्तिपूजा बन गई है। व्यक्ति तथा समष्ठि जीवन में शक्ति का अनुशीलन का नाम तक नहीं। पददलित अपमानित और लांछित होने पर भी प्रतिकार के लिये आज हिन्दू तत्पर नहीं है। इसके साथ अहिंसा आदर्श की छाया की मायाने जाति को मोहाच्छन्न तथा अचेतन बनाते हुए जाति को मृत्यु के विकराल गढ़े में ढकेले लिये जा रही है। आचार्य देवने तीव्र आवाज उठायी थी कि हिन्दू का

धर्म शक्ति की साधना है। जो धर्म शक्ति नहीं देता वह धर्म नहीं अधर्म है। हिन्दू के उपास्य देव, देवी सभी अस्त्र-शस्त्र से लैस हैं। अत्याचारी दैत्य, दानव, असुर का निधन ही उनकी लीला है। मुर्दों को उच्च आदर्श सुनाना निरर्थक है। मृत शरीर में पहले प्राणशक्ति संचारित करनी पड़ेगी। जाति आज मुर्दों जैसी निश्चेष्ट और स्तब्ध है। अतः शक्ति साधना ही जाति गठन का पहला कदम होना चाहिये। शारीरिक, मानसिक, नैतिक, आध्यात्मिक, सब प्रकारकी शक्तिका अनुशीलन, विकास, प्रकाश तथा प्रयोग करना पड़ेगा।

धर्म राष्ट्र गठन का संकल्प।

ई० १९२९ में आचार्य देव अपने सिद्ध पीठ श्रीप्रणव मठ में विशाल पैमाने पर माघी पूर्णिमा सम्मेलन आरम्भ किया, हजारों लाखों नरनारियों के समागम में भगवद् भाव के आवेश में जगद्गुरु के रूपमें अर्घ्य ग्रहण कर आशीर्वाद दान और शक्ति संचार करने लगे। इस समय से १० प्रचारक दल सारे भारत और भारत के बाहर धर्म प्रचार कार्य में संलग्न थे।

ई० १९३२ में आचार्य देव में भगवद भावका महा प्रकाश हुआ। निकट भविष्य में हिन्दू जाति के नेतृत्व में जो धर्मराष्ट्र स्थापित होनेवाला है उस धर्मराज्यके अधिराजके वेशमें सिंहासन पर अभिषिक्त तथा अधिष्ठित होकर वे लाखों नरनारी की



जगद्गुरु आचार्यदेव

धर्मराष्ट्र संगठक आचार्य देव भगवद्भावावेश में सिंहासन के ऊपर अधिष्ठित होकर लाखों नरनारियों की पूजा अर्घ्य गृहीत कर आशीर्वाद और वराभय प्रदान कर रहे हैं।

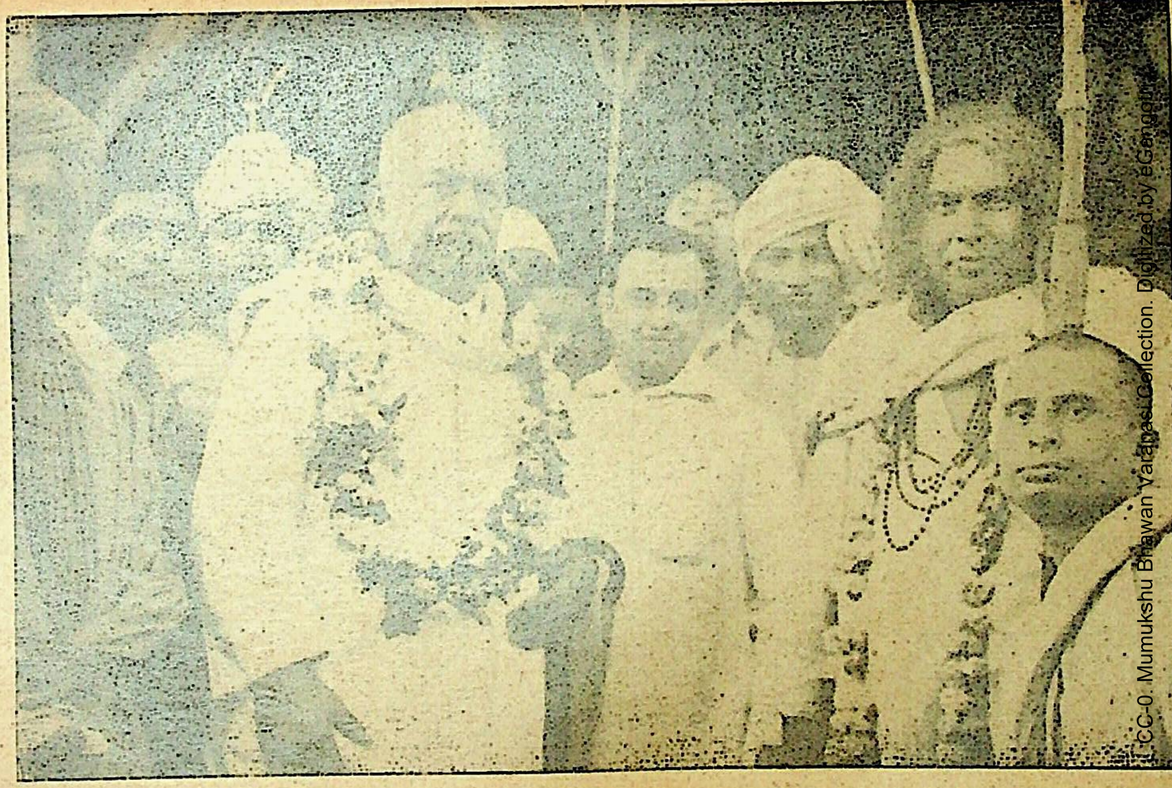
पूजा और भक्ति ग्रहण कर धर्मराष्ट्र गठन का संकल्प और शक्ति सञ्चारित करने लगे।

सनातन धर्मका पुनः संस्थापन तथा धर्मराष्ट्र गठन के संकल्प को कार्यान्वित करने के लिये "अखण्ड हिंदू जाति गठन" के उद्देश्य से ई० १९३५ में आचार्य देव ने "हिंदू समाज समन्वय आंदोलन" प्रवर्त्तित किया।

अखण्ड हिन्दू जाति संगठन

भारत के विभिन्न प्रान्तों के शहर व गाँवों में प्रमुख विद्वानों तथा नेतागणकी उपस्थिति में बड़े-बड़े सम्मेलनों में "हिन्दू धर्म संस्कृति का पुनरुत्थान" तथा "हिन्दू समाज का पुनर्गठन" इत्यादि विषयों पर भाषण आलोचनायें और प्रस्ताव पास होने लगे। सब समाचारपत्रों में प्रकाशित होने से देश भर में इस प्रकार का वातावरण तैयार हुआ।

उन्होंने घोषणा की—मेरा हिन्दू संगठन भारत में महा जातिगठन का विरोधी नहीं है। इसमें साम्प्रदायिकता नहीं आ सकती। मैं छिन्न-भिन्न बिखरे हुए हिन्दुओं को धार्मिक सामाजिक आदर्शों के अनुष्ठान, दायित्व तथा कर्त्तव्य के आधार पर भ्रातृत्व तथा सहयोगिता के सूत्र में बांध देना चाहता हूं।



अखण्ड हिन्दू जाति संगठक आचार्यदेव

कलकत्ता में स्वर्गीय सार मन्मथनाथ मुखर्जी के सभापतित्व में अनुष्ठित विराट हिंदू सम्मेलन के तोरण में सभापति के साथ आचार्य देव। इस सम्मेलन में आचार्य देव ने हिंदुओं को आत्मरक्षा के लिये रक्षक दल गठित करने का सिद्धान्त ग्रहण किया।

उस समयके नेतागण जो साम्प्रदायिक मिलन का राग अलापते थे उनकी आवाजमें आवाज न मिलाकर उन्होंने निर्भीकता से घोषणा की—"हिन्दू मुसलमान मिलन आजकी समस्या नहीं है। हिन्दू के साथ हिन्दू का मिलन ही आजकी समस्या है। क्योंकि बराबरी में मिलन होता है। सबल और दुर्बल में मिलन नहीं होता है! सिंह के साथ सिंह का, शेर के साथ शेर का मिलन होता है। क्या कभी शेर और भेड़ में मिलन होता है? मुसलमान स्वधर्म प्रेमी, भ्रातृत्व के अटूट बन्धन से संघबद्ध तथा शक्तिशाली हैं। हिन्दू जब स्वधर्म निष्ठ और भ्रातृत्व के प्रेम से परस्पर सम्मिलित तथा शक्तिशाली होंगे तभी हिन्दू मुसलमान में मिलन सम्भव होगा। अतः हिन्दू मुसलमान का मिलन हिन्दू के साथ हिन्दू का मिलन पर ही निर्भर है।

हिन्दू-मिलन-मन्दिर

हिन्दुत्व विरोधी शक्ति संघ के कूट षड़यन्त्र जाल के चंगुल में फँसकर हिन्दू नेता तथा जनता साम्प्रदायिकता के कल्पित भूत

के डर से भयभीत हैं। हिन्दू संतान हिन्दू धर्म और समाज के नाम से शरमाता और संकोच करता है। यहाँ तक कि हिन्दू नामसे परिचय देने में भी संकोच करता और भय खाता है। आचार्य देवने इस प्रकार अहिन्दू मनोवृत्ति पर तीव्र कराघात करते हुए वज्र निर्घोष से कहा—जिसका जो नाम है उसको उसी नाम से पुकारने से जवाब मिलता है। सदियों से हिन्दू को हिन्दू नाम से किसी ने नहीं पुकारा। मैं हिन्दू जनता को हिन्दू नामसे पुकारना चाहता हूं। "समग्र हिन्दू जनता को (बौद्ध, जैन, शिख, पार्सी, आर्य समाजी, सनातनी) हिन्दू मिलन मन्दिर में एकत्र कर हिन्दू नामसे पुकारना ही मेरा परम उद्देश्य है।" हिन्दू मिलन मन्दिर लकड़ी-पत्थर का मन्दिर नहीं है। बिखरे हुए समाज को एकत्र कर विराट हिन्दू मिलन मन्दिर गठित होगा। हिन्दू मिलन मन्दिर—हिंदू का सार्वजनोन मिलन केन्द्र, और समवेत धर्मानुष्ठान तथा समाज संस्कार का क्षेत्र है। सब सामाजिक और जातीय समस्या का समाधान और हिन्दू संघ शक्ति तथा क्षात्र शक्ति का अनुशीलन केन्द्र है।

आचाय देवने समझाया—"हिन्दुओं के पास सब कुछ हैं। विद्या, बुद्धि, धन, शक्ति, सामर्थ्य एक भी वस्तु का अभाव नहीं है। केवल संघ शक्ति और क्षात्रवीर्य का ही अभाव है। मैं हिन्दू समाज में इन दोनों शक्तियों का

पुनर्जागरण और संचार करना चाहता हूं। मैं ३० करोड़ हिन्दू संगठित करना चाहता हूं। यहां पर छूआछूत का कोई सवाल नहीं रहेगा। यहां पर किसी प्रकार के भेद या द्वेष का स्थान नहीं रहेगा। केवल मिलन, मित्रता, एकता, प्रेम, सहानुभूति, भ्रातृत्व-बोध रहेगा। आदिवासियों को भी आदर के साथ समाज में ग्रहण कर योग्य मर्यादा देनी पड़ेगी, धर्मान्तरित हिन्दुओं को मर्यादा के साथ शुद्ध कर समाज में ग्रहण करना पड़ेगा। अपहृता, लांछिता नारियों को निकाल बाहर करने से नहीं चलेगा। विशाल हिन्दू जनता को प्रत्येक व्यक्ति जब अनुभव करेगा उसके पीछे सम्मिलित हिन्दू जनता की शक्ति है तब ही हिन्दू जाति शक्तिमान, अजेय, और दुर्जय होगी, उसी समय हिन्दू की जातीय समस्या का समाधान होगा।

उपर लिखे हिन्दू संगठन के भाव, आदर्श और कर्मधारा समग्र देश में प्रसारित करने के लिये विशाल प्रचार वाहिनी के साथ विभिन्न स्थानों में भ्रमन कर उन्होंने एक प्रबल तरंग उठाई। उस प्रबल जोश के वेग से हिन्दू नेतागण संगठन कार्य में ध्यान देने लगे।

हिन्दू रक्षकदल।

हिन्दू समाज पर हाज़ारों अत्याचार-लगातार दंगा, लांछन, पीड़न, नारीहरण प्रभृति विपदों से हिन्दू किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गये। उस समय राजनीति क्षेत्रके नेतागण की नाराजगी तथा अंगरेज सरकार और लीगमन्त्रिमण्डल के क्रोध की परवाह न कर आचार्य



दुष्ट-दुर्वृत्त का शासक और धार्मिकों का रक्षक

आचार्य देव

देवने "रक्षक दल गठन" का कार्य आरम्भ किया। उन्होंने घोषणा कि—"हिन्दू जाति शक्ति का उपासक है; क्षात्रवीर्य का साधक है। हिन्दू देवता क्षात्रवीर्य की प्रतिमूर्त्ति है। अत्याचारी का निधन ही देवताओं की लीला है। अत्याचार का प्रतिकार दुष्टों को दमन तथा शिष्टों का पालन करना ही हिन्दू का धर्म है। हिन्दू को आज उपास्य देवगण की भाँति अस्त्र-शस्त्र से लैस होकर मृत्यु भय को पैरों तले कुचलकर आत्मरक्षा के लिये—स्वधर्म, स्वसमाज, स्वजाति की रक्षा के लिये व्रत ग्रहण करना होगा।

आचार्य देवने हिन्दू के सामने पंचपान्डव, महाराणा प्रताप सिंह, महाराष्ट्र पति शिवाजी, सिखगुरू गुरू गोविन्द सिंह के जीवन और चरित्र का प्रोज्वल चित्र रख कर निश्चेष्ट हिन्दुओं में धर्म समाज - नारीकी रक्षाके लिये सर्व प्रकार के आघातों और आक्रमणोंका प्रतिरोध करने की दुर्निवार प्रतिज्ञा जाग्रत करने लगे। कलकत्ता के विराट सम्मेलन में "हिन्दू रक्षक दल" का प्रस्ताव पास हुआ। आचार्य देव स्वयं अस्त्र-धारी रक्षकदल के साथ विजली की तरह प्रचार करने लगे। गाँव-गाँव शहर-शहर में हजारों रक्षकदल तैयार हुए। इस प्रकार श्रीभगवान इस युगमें "परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृतां धर्मसंस्थापनार्थाय अलौकिक तपः शक्तिशाली आचार्य में प्रकटित होकर अखण्ड शक्तिशाली दिग्विजयी हिन्दू जाति गठन और धर्म राष्ट्र स्थापन की सूचना दी।

जैसे-जैसे समय बीत रहा है वैसे ही वैसे उनकी अमोघ संकल्प शक्ति सर्वप्रकार की अवस्थाओं में उनकी



क्षात्र धर्म का पुनः प्रवर्तक आचार्यदेव

सिद्धपीठ श्री प्रणव मठ में माघ की पूर्णिमा के अवसर पर अनुष्ठित महा-सम्मेलन में सैंकड़ों रक्षकदल के युद्ध-क्रीड़ा प्रदर्शनी में उपस्थित होकर आचार्य देव ने उत्साह और तेजःसंचार कर रहे हैं।

कर्मधाराका बेरोकटोक बिजलीकी तरह प्रसारित कर रही है। राष्ट्र विप्लव, दैव विपत्ति, राजनैतिक षड़यन्त्र ने किसी प्रकार रुकावट नहीं डाली। भारत और भारत के बाहर उनकी विश्व कल्याण की वाणी और हिन्दू संस्कृति की धारा प्रसारित हो रही है। उनकी अभय आर्शीवाद की वाणी प्रतिदिन पग पग पर प्रत्यक्ष

और सार्थक हो रही है। "सर्व नियन्ता भगवान् ने स्वयं तुम लोगों के तिर्थ संघकी बागडोर हाथ में उठा ली है। इस संघ से महा कल्याण साधित होगा।" "ऐसा समय आरहा है जब करोड़ों नरनारी संघ का आकार धन्य और कृतार्थ मानेंगे।"

हिन्दुओं, जागो !! चेतो और उठो !!!

ॐ

"भारत! तुम 'ब्रह्म व ब्रह्मविद' के अलौकिक तपः शक्तिके अपूर्व महिमाधन मूर्त्तमान आदर्श हो। आज विश्व सभासे तुम्हारे लिये आह्वान आया है। विश्वमानव कल्याणके लिये आज तुम्हारे आर्य हृदय शोणितसे सीचे हुए वैदिक आदर्शका विश्वव्यापी विराट क्षेत्रमें फैला देना होगा। समग्र जगत शान्ति और सान्त्वनाकी आशामें तुम्हारी ओर टकटकी लगाये हुए हैं ? तुम इसका अनुभव तो करो।" (ध्रुव भारत)

"भारत! भूलो मत, कि तुम ऋषियों की सन्तान हो। तुम्हारा धर्म और समाज ऋषियोंके हाथों बने हुए हैं। ऋषियोंके आदेश अनुसार वे चलते रहे हैं। तुम्हारे जीवनका हर एक काम ऋषियोंके द्वारा निर्दिष्ट किया हुआ है। त्याग, संयम, सत्य, ब्रह्मचर्य यही तुम्हारी सनातन आदर्श हैं। यही तुम्हारे जातीय जीवनके मूल मन्त्र हैं। प्राणोंकी बाजी लगाकर इनको अवलम्बन किये रहो। अगर तुम गिर भी पड़ोगे, तो तुम्हारा विनाश नहीं होगा पुनः उठना अनिवार्य हैं—अवश्यम्भावी है। ब्रह्मचर्यका अवलम्बन करो, समाज और जातीय जीवनमें ब्रह्मचर्यके अमोघ तेज और ओजका संचालन होने दो—भारत पुनः सोनेका भारत बन जायेगा।" ध्रुव भारत।

हिंदू का मूल आदर्श

१—लक्ष्य क्या है ? आत्मोपलब्धि ।

२—धर्म क्या है ? त्याग, संयम, सत्य, ब्रह्मचर्य ।

३—प्रकृत जीवन क्या है ? आत्मबोध, आत्मस्मृति, आत्मानुभूति ।

४—महामृत्यु क्या है ? आत्मविस्मृति ।

५—महापुण्य क्या है ? वीरत्व, पुरुषत्व, मनुष्यत्व, मुमुक्षुत्व ।

६—महापाप क्या है ? दुर्बलता, कायरता, संकीर्णता, स्वार्थपरता ।

७—महाशक्ति क्या है ? धैर्य, स्थैर्य, सहनशीलता,

८—महासम्पत्त क्या है ? आत्म-विश्वास, आत्मनिर्भरता, आत्म-मर्य्यादा ।

९—महाशत्रु क्या है ? अलसता, निद्रा, तन्द्रा, रिपु और इन्द्रियगण ।

१०—परममित्र क्या है ? उद्यम, उत्साह, अध्यवसाय ।

हिंदू की मूल नीति ।

१—भगवद् विश्वास और धर्म में निष्ठा रखनी होगी ।

२—गुरु ऋषि और शास्त्र में विश्वास और श्रद्धा रखनी होगी ।

३—हिन्दुत्व की नीति और सदाचार पालन करना होगा ।

४—स्वधर्म में अनुरागी और निष्ठावान होना पड़ेगा ।

५—आहार-बिहार और वेश लिवास में जहाँतक बन सके हिन्दू का भाव रखना होगा ।

६—प्रतिदिन संध्या-वंदन करना होगा ।

७—बीरत्व तथा शक्ति-चर्चा करना ।

८—परस्पर संवद्ध होकर काम करने का अभ्यास करना चाहिये ।

९—हिंदू धर्म, हिंदू समाज और हिंदू सभ्यता का गौरव बोध जाग्रत रखना ।

संघके हिन्दू धर्म तथा जातीयता-मूलक पुस्तकें

(१) ब्रह्मचर्य्यम् ... ... ।)

(२) गार्हस्थ्यम् ... ... ।=)

(३) भारत में गुरुपूजा ... ... ।)

(४) संघनेता का अवदान ... ... ।=)

(५) श्री श्री युगाचार्य जीवन-चरित

हिन्दू-जाति-संगठक

संघनेता आचार्य

श्रीमत् स्वामी प्रणवानन्दजी की जीवनी ।)

पुस्तक मिलने का पता—

भारत सेवाश्रम संघ

२११, रासबिहारी एभिनिउ, बालीगंज, कलकत्ता-१९ ।

फोन नं० पा. के. ११७८

मुद्रक—नवरतनमल सुराना, सुराना प्रिन्टिङ्ग वर्क्स, कलकत्ता ।